बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 271

विजन 2020

भारत की आर्थिक वृद्धि पिछली पांच तिमाहियों से लगातार सुस्त पड़ती जा रही है और पूर्वानुमानों की मानें तो निकट भविष्य में इसके तेज होने की संभावना काफी कम है। इस दौरान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने मुख्यत: सामाजिक एजेंडे वाले कदम उठाए जिन्होंने उन्हें भारी बहुमत दिलाया। लेकिन राज्यों में उनकी पार्टी के सिकुड़ते आधार को उन्हें इसका संकेत मानना चाहिए कि अर्थव्यवस्था की कीमत पर हिंदुत्व के घोषणापत्र को प्राथमिकता देने के जोखिम भी हैं। नागरिकता संशोधन अधिनियम (सीएए) को लेकर जारी हंगामे के बीच झारखंड में मिली हार के बाद भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) देश के 71 फीसदी से घटकर 35 फीसदी क्षेत्र तक सिमट गई है। यह इस द्विभाजन का सबसे सटीक संकेतक है। झारखंड में मोदी और गृहमंत्री अमित शाह के अभियान में आदिवासी मतदाताओं के बारे में घुमावदार समझ दिखी। बढ़ती बेरोजगारी और नक्सली समस्या यहां की सबसे बड़ी चिंताएं हैं लेकिन शाह इन मुद्दों के बजाय अयोध्या में आसमान छूने वाला मंदिर बनाने की बात करते रहे। इसके पहले भारत की वित्तीय राजधानी कहे जाने वाले राज्य महाराष्ट्र में भी भाजपा पिछली बार से भी कम सीटें जीत पाई और अपने दम पर निर्णायक बहुमत नहीं जुटा पाई। इसका नतीजा यह हुआ कि भाजपा की तमाम कोशिशों के बावजूद उससे नाराज एक पुराने सहयोगी दल की अगुआई में दूसरी सरकार बन गई।

इन दोनों राज्यों में मिली हार राष्ट्रीय एवं राज्यों के चुनाव में फर्क कर पाने की समझ पर सवाल उठाती हैं। यह संभव है कि राष्ट्रीय चुनाव कहीं बड़े एवं अमूर्त विचारों पर लड़े जाएं लेकिन राज्यों के चुनाव अमूमन रोजी-रोटी के मसले पर ही लड़े जाते हैं। वर्ष 2017 में गोवा और कर्नाटक में विधायकों के पाला-बदल के समय भी यह दिखा था। हिंदी पट्टी के तीन राज्यों- राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में दिसंबर 2018 में मिली शिकस्त भाजपा के लिए चेतावनी होनी चाहिए थी। उन तीनों राज्यों में ग्रामीण असंतोष गहराने का मुद्दा सबसे अहम था। इस असंतोष के लिए वर्ष 2016 में हुई नोटबंदी और उसके एक साल बाद जीएसटी प्रणाली के जल्दबाजी में क्रियान्वयन को जिम्मेदार माना गया।

मोदी ने 2019 के चुनावों की आचार संहिता लागू होने से ऐन पहले कृषि आय समर्थन योजना की घोषणा की थी लेकिन वह जमीन से आ रहे संदेश को ठीक से समझ नहीं पाए। इस पर ध्यान देने के बजाय उन्होंने वायुसेना के विमानों को पाकिस्तान की सीमा के भीतर जाकर आतंकी ठिकानों पर हमले करने का बहुत बड़ा दांव खेल दिया। मोदी ने मान लिया कि उन्हें दूसरी बार मिला बहुमत 'अधिक साहसी एवं बड़े हिंदुत्व' के लिए निर्देश-पत्र है। अनुच्छेद 370 को निष्प्रभावी करना, जम्मू कश्मीर को दो केंद्रशासित प्रदेशों के रूप में बांटना, सीएए को पारित कराना और देश भर में राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर (एनपीआर) प्रक्रिया शुरू करने की घोषणा इसी दिशा में उठाए गए कदम हैं। लेकिन सीएए-एनपीआर जोड़ी पर गैर-भाजपा शासित राज्यों और कुछ गठबंधन सहयोगियों की कड़ी आपत्तियों के बाद मोदी की हिंदुत्व परियोजना राज्यों के हाथों में बंधक बन गई है।

गुजरात के मुख्यमंत्री के रूप में लंबा अनुभव रखने से मोदी को पता होना चाहिए कि आर्थिक सफलता के लिए जमीनी काम किए बगैर कोई भी सामाजिक एजेंडा हासिल नहीं किया जा सकता है। 2014 में राज्यों पर भाजपा की मजबूत पकड़ से कठिन आर्थिक सुधार करने का सुनहरा मौका मिला था लेकिन उन्होंने उसे गंवा दिया है। सतत वृद्धि के पथ पर बढ़ने के लिए ये सुधार बेहद जरूरी थे। अब वह 'सशक्त भारत' के एजेंडे का विस्तार अर्थव्यवस्था तक कर अर्थव्यवस्था को काफी नुकसान पहुंचा रहे हैं। भारत जैसे युवा देश में बढ़ती बेरोजगारी वर्ष 2020 में मोदी के समक्ष मौजूद चुनौतियों एवं खतरों दोनों को अभिव्यक्त करती है।

बिनय सिन्हा

हकीकत से दूर है सत्ता की मानसिकता

सत्ताधारी राजनेताओं की बातें उपदेशात्मक हो जाती हैं। उन्हें सुनकर यह साफ हो जाता है कि वे हकीकत से पूरी तरह कटे हुए हैं। इस संबंध में विस्तार से बता रहे हैं देवाशिष बसु

भारत में शासन करने का पहला नियम यह है कि जन प्रतिनिधि सत्ता में आते ही जनता की बातें सुनना बंद कर देते हैं। दूसरा नियम यह है कि कोई समूह जितने लंबे समय तक सत्ता में रहता है, उतना ही अहंकारी और हकीकत से दूर होता जाता है। तीसरा नियम यह कि सत्ताधारी दल के राजनेता एक दूसरे की अनुगूंज बन जाते हैं, भले ही हम सुनने वालों को वह कितना ही मूर्खतापूर्ण और वास्तविकता से परे नजर आए। इन नियमों के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण इस समय हमारे आसपास हैं।

कांग्रेस के नेतृत्व वाली सरकार के 2011-13 के अंतिम दिनों को याद कीजिए। व्यापक भ्रष्टाचार, एक जघन्य बलात्कार, आर्थिक मोर्चे पर ठहराव और नीतिगत विफलताओं ने पूरे देश को जकड़ रखा था। इसका विरोध करने के लिए उस दौर में गरीब, व्यस्त और असंवेदनशील लोग भी सड़क पर उतर आए थे। क्या मौजूदा दौर में भी मनोदशा उसी दिशा में बढ़ रही है? संप्रग-2 के दौर के तमाम कारक हमारे बीच मौजूद हैं केवल भ्रष्टाचार को छोड़कर। कुशासन और उद्देश्यविहीन विचलन देखे जा सकते हैं। एक बार फिर जघन्य बलात्कार के खिलाफ प्रदर्शन देखने को मिल रहा है, अर्थव्यवस्था में गिरावट का सिलसिला जारी है, अब अचानक लोगों को नागरिकता और राष्ट्रीय पंजीयन की नई प्रक्रिया से दो-चार होना पड़ सकता है। इसकी कुल लागत 70,000 करोड़ रुपये से अधिक होगी। यह ऐसे समय पर हो रहा है जब सरकार का खजाना खाली है। गलत समय पर उठाए गए इस कदम के खिलाफ स्वत: स्फूर्त विरोध देश भर में देखने को मिल रहा है। ठीक पिछली सरकार की तरह छह साल से सत्ता में बनी हुई यह सरकार भी सुनने को तैयार नहीं है।

पिछले प्रधानमंत्री व्यक्तिगत रूप से ईमानदार थे लेकिन वह नागरिकों और कारोबारियों की रोजमर्रा की समस्याओं से दूर नजर आते थे। मौजूदा प्रधानमंत्री भी इससे कतई अलग नहीं नजर आते। उनके मंत्री भी एक सिरे से हकीकत से दूर नजर आते हैं। पूर्व वित्त मंत्री पी चिदंबरम किसी सम्राट की तरह बातें किया करते थे। वह आर्थिक कारकों को आदेश देते थे कि वे सक्रिय हों और वह मानो घटनाओं को सुनिश्चित करते थे। कुछ दिन पहले मौजूदा वित्त मंत्री ने भी लगभग वैसी ही टिप्पणी में कहा, 'मैंने सरकारी बैंकों से कहा है कि वे रिवर्स रीपो का इस्तेमाल करने के बजाय ऋण दें।' उन्होंने जोर देकर कहा कि सरकार बैंकों की निर्णय प्रक्रिया में कोई हस्तक्षेप नहीं करेगी। उन्होंने देश के कारोबारी जगत को भी यह 'सलाह' दी कि वे निजीकृत की जा रही सरकारी कंपनियों को लेकर उत्साह दिखाएं। उन्होंने कंपनियों से कहा कि वे अपने मन का संदेह दूर करें और कारोबारी भावना जागृत करें।

जाहिर है कंपनियां उनकी बात नहीं सुन रहीं। करीब 16 वर्ष पहले तत्कालीन विनिवेश मंत्री अरुण शौरी ने कहा था कि सरकारी कंपनियां कोई ताज में जड़ा आभूषण नहीं हैं बल्कि ये ऐसे घाव हैं जिनसे रक्तस्राव हो रहा है। एक के बाद एक सरकारों के कार्यकाल में उनकी स्थिति और खराब हुई है। ऐसे में किसी से यह कहना कि वह इन कंपनियों के लिए उत्साहित होकर बोली लगाए, हास्यास्पद ही है। उसी दिन प्रधानमंत्री ने औद्योगिक संगठन एसोचैम के सदस्यों से कहा कि वे निर्भय होकर निवेश का निर्णय करें। सुनने वालों में देसी और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के दिग्गज शामिल थे। जैसा कि मैंने कहा, राजनेता एक अलग ही दुनिया में रहते हैं।

ऐसा कोई व्यक्ति जिसे देश में कारोबार की समझ है। वह जानता है कि देश में कारोबार को सफलतापूर्वक आगे बढ़ाना और लाखों रोजगार तैयार करना कितना मुश्किल है। जो कंपनियां बची रहीं और देश की विषाक्त राजनीतिक अर्थव्यवस्था में फली-फूलीं उन्हें रोज रिश्वत, निर्णय प्रक्रिया में देरी, तमाम तरह के कायदों और लाइसेंस, अदालती मुकदमों, राजस्व विभाग की मांग, पुरातन कानूनों आदि से निपटना पड़ा। उन्हें भाषण की जरूरत नहीं है। आखिर राजनेता, जिनमें से कुछ ने तो चुनाव भी नहीं जीता, जीवन में बहुत उपयोगी कुछ नहीं किया, रोजगार या संपत्ति नहीं पैदा की, उन्हें इन सफल उद्योगपतियों को यह भाषण देने में शर्म नहीं आती कि वे साहसी बनें और अपने संशय से बाहर निकलें?

वजह आसान है: एक बार सत्ता में आने के बाद वे हकीकत से दूर हो जाते हैं और तमाम असहज करने वाले तथ्यों को नकारात्मकता बताने लगते हैं। उन्हें लगता है कि जो वे कर रहे हैं वही सही है। वर्ष 2008 के बाद फंसे कर्ज में इजाफे के लिए जिम्मेदार रहे तत्कालीन वित्त मंत्री प्रणव मुखर्जी का भी यही रुख था। हाल ही में प्रधानमंत्री ने स्पष्ट किया कि अर्थव्यवस्था डांवाडोल है क्योंकि मौजूदा सरकार को पिछली सरकार का कचरा साफ करना पड़ा। इसे सच मान लिया जाए तो क्या कोई प्रधानमंत्री से पूछेगा कि उन्होंने ऐसी गंदगी के जिम्मेदार व्यक्ति को भारत रत्न का खिताब क्यों दिया? हमसे यह अपेक्षा नहीं की जाती कि हम यह या ऐसे तमाम अन्य असहज करने वाले प्रश्न करें। जबकि नेता प्राय: एक दूसरे की बात दोहराते हुए यह बताते रहते हैं कि लोगों को क्या करना चाहिए। वित्त मंत्री और प्रधानमंत्री ने एक ही दिन यह अपील की कि कारोबारियों को घबराना नहीं चाहिए।

मुझे यह सब देखकर अचरज होता है कि आखिर रोजगार की कमी से जूझ रहे देश में रोजगार तैयार करने वाले सफल कारोबारी रोजगार नष्ट करने वाले राजनेताओं के समक्ष याचक की भूमिका में क्यों नजर आते हैं। उन्हें उनकी बेतुकी सलाह सुननी पड़ती है। पिछले दिनों एसोचैम की बैठक में प्रधानमंत्री पर्याप्त तालियां न बजने से नाखुश थे। उन्होंने यहां तक कह दिया कि वहां मौजूद लोग समझ ही नहीं रहे हैं कि वह क्या कहना चाहते हैं। इन सफल कारोबारियों ने इस अपमान पर हंसना शुरू किया और तालियां बजानी तेज कर दी। जब प्रधानमंत्री ने उनका और अपमान करते हुए आरोप लगाया कि वे विभिन्न मंत्रियों को फोन करके उनसे मदद का अनुरोध करते हैं तो वे खामोशी से सुनते रहे।

मैं समझता हूं कि इस विषय में ज्यादा कुछ नहीं किया जा सकता है। सरकार को पांच साल में एक बार ही बदला जा सकता है और इससे भी कुछ खास नतीजा निकलता नहीं दिखता। हमें कम से कम इस अंतहीन भाषणबाजी की अनदेखी करनी चाहिए और देशभक्ति, राष्ट्रवाद, उद्यमिता, स्वच्छता आदि को लेकर अंतहीन सवालों की झड़ी का शिकार बनने से इनकार करना चाहिए। इसलिए क्योंकि नेता, बाबू और राजनीतिक दल स्वयं को इन तमाम परीक्षणों से सुरक्षित रखते हैं।

भारतीय अदालतों में क्यों कारगर नहीं होगी कृत्रिम मेधा

अदालती आईना

एम जे एंटनी

कृत्रिम मेधा को भारत में कई अतिरिक्त चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा। मुकदमा लड़ रहे लोगों को जीतने में मदद करने वाले ज्योतिषी वकीलों के चैंबरों के आसपास मंडराते रहते हैं।

अगर देश के सभी कानूनों को एक के बाद एक साथ जोड़ लिया जाए तो इससे एक अंतहीन सिलसिला बन जाएगा। भारत में दुनिया का सबसे बड़ा संविधान है जिसमें 1,17369 शब्द हैं। अमेरिका के संविधान में केवल 4,543 शब्द हैं। देश में 1,248 मुख्य कानून हैं। हालांकि केंद्रीय और राज्य कानूनों की कोई गिनती नहीं है। उच्चतम न्यायालय हर साल जो फैसले देता है, वे 16 खंडों में छपते हैं। इसे 24 उच्च न्यायालयों से गुणा कर दीजिए। फिर हर राज्य के लिए प्रक्रियागत नियम हैं। इन आंकड़ों को केवल कृत्रिम मेधा (आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस) से ही संभाला जा सकता है। कृत्रिम मेधा विधि क्षेत्र में नई अवधारणा है।

अलबत्ता, भारतीय विधि व्यवस्था अब भी बुनियादी डिजिटल साक्षरता से जूझ रही है। उच्चतम न्यायालय में याचिका दायर करने के लिए शुरू की गई ई-फाइलिंग व्यवस्था को बहुत अच्छी प्रतिक्रिया नहीं मिली है। पिछले तीन वर्षों में इसके माध्यम से केवल कुछ सौ याचिकाएं ही दायर की गई हैं। ऐसा वकील दिखना दुर्लभ है जो सामने लैपटॉप रखकर अदालत में अपनी दलील पेश करे। उच्चतम न्यायालय ने हाल में पास ही 12 एकड़ में फैली बहुमंजिला इमारतों में अपना विस्तार किया है। यह इस बात का संकेत है कि न्यायपालिका अभी कृत्रिम मेधा के लिए तैयार नहीं है। आम बजट में न्यायपालिका के लिए 0.2 फीसदी बजट रखा गया है, उसे देखते यही उम्मीद की जा सकती है।

मुख्य न्यायाधीश एसए बोबड़े ने हाल ही में घोषणा की थी कि निर्णय लेने की प्रक्रिया में कृत्रिम मेधा का इस्तेमाल नहीं किया जाएगा। फिर भी वह कृत्रिम मेधा की भूमिका को अहम मानते हैं। उन्होंने कहा कि यह प्रति सेकंड 10 लाख शब्द पढ़ सकता है और हजारों पन्नों वाले मामलों में सवालों का जवाब दे सकता है। हाल में अयोध्या मामले में ऐसा देखने को मिला था।

चूंकि न्यायपालिका की कृत्रिम मेधा अपनाने की रफ्तार बहुत धीमी है, इसलिए स्वाभाविक है कि विधि पेशेवरों की चाल भी धीमी है। डेटा क्रांति के लिए विधि कॉलेजों में बहुत कम तैयारी है। विधि विभाग पुराने पाठ्यक्रमों में उलझे हुए हैं और वे भविष्य में ऐसे वकील बनाने के लिए तैयार नहीं हैं जो कृत्रिम मेधा का इस्तेमाल कर सकें। न्यायाधीशों की भी डिजिटल में रुचि नहीं है और वे अब भी पुराने दौर से बाहर आने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

हालांकि कानून और प्रक्रियाओं से संबंधित सॉफ्टवेयर धीरे-धीरे बाजार में उपलब्ध हो रहे हैं लेकिन अभी कुछ ही विधि फर्में उनका इस्तेमाल कर रही हैं। सामान्य वकील उनका बोझ वहन नहीं उठा सकते हैं और न ही उन्हें इस्तेमाल कर सकते हैं। इतना ही नहीं, अगर वकील के कमरे में कानून की ढेरों किताबें रखी गई हैं तो मुवक्किल भी इससे प्रभावित होते हैं। वकील मौजूदा व्यवस्था में ज्यादा सहज महसूस करते हैं और इसे अपने कारोबार के लिए अच्छा मानते हैं।

कृत्रिम मेधा अभी मुख्य रूप से शोध के लिए उपयोगी है। अभी विधि फर्में में जूनियर वकील यह काम करते हैं। कृत्रिम मेधा के जरिये इस काम को बेहतर ढंग से किया जा सकता है। यह कंपनी जगह के मुवक्किलों को सलाह देने में मददगार है और इसके जरिये उन्हें अनुबंध पर हस्ताक्षर किए जाने से पहले पूरी प्रक्रिया से वाकिफ कराया जा सकता है। बार-बार होने वाले नियमित काम में इसकी उपयोगिता बहुत ज्यादा है। सर्वेक्षणों के मुताबिक यह 70 फीसदी से अधिक सटीक होता है। विधि पेशेवरों को आशंका है कि एआई के आने के बाद उनका भी वही हाल हो सकता है जो भाप इंजन आने के बाद घोड़ों का हुआ था।

दूसरे मायनों में भी कृत्रिम मेधा का भविष्य वकीलों के लिए शुभ नहीं है। आशंका है कि एक बार शुरू होने के बाद यह किसी भी मामले के परिणाम की भविष्यवाणी कर सकता है। यह कानून, नजीर और न्यायिक सोच को बेहतर समझता है। इसमें केवल मानवीय कारक नहीं है जैसे न्यायाधीशों का रवैया और वकीलों के तर्क। अगर अदालत में कैमरे की अनुमति दी जाए तो कृत्रिम मेधा न्यायाधीश के भावों का बेहतर विश्लेषण कर सकता है।

अगर कृत्रिम मेधा का चलन आम हो गया तो मुवक्किल भी अपने मामलों की सफलता का अनुमान लगाने के लिए सॉफ्टवेयर का इस्तेमाल कर सकते हैं। अगर उन्हें लगता है कि उनका पक्ष कमजोर है तो वे मध्यस्थता या निपटारे में जाना पसंद करेंगे। इससे विधि पेशेवरों का भारी नुकसान होगा। डॉक्टरों को अक्सर मरीजों के खास सवालों का सामना करना पड़ता है। गूगल ने अब लोगों को काफी समझदार बना दिया है। वकीलों को भी भविष्य में इसी तरह की स्थिति का सामना करना पड़ सकता है। अंत में कृत्रिम मेधा को भारत में कई अतिरिक्त चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा। मुकदमा लड़ रहे लोगों को जीतने में मदद करने वाले ज्योतिषी वकीलों के चैंबरों के आसपास मंडराते रहते हैं। भृगु संहिता में मौजूदा और भविष्य में होने वाली घटनाओं के बारे में पूरी जानकारी होती है। फिर कम से कम दो मंदिर ऐसे हैं जहां के देवताओं को मुकदमा लड़ रहे लोगों को जीत का आशीर्वाद देने में विशेषज्ञता हासिल है। इनमें से एक मंदिर हिमाचल में और दूसरा केरल में है।

कानाफूसी

झारखंड में साफ-सफाई

झारखंड में गठित नई सरकार ने सोमवार को मुख्यमंत्री के प्रमुख सचिव तथा आईएएस अधिकारी सुनील कुमार बर्णवाल को उनके पद से हटा दिया। बर्णवाल वर्ष 2015 से इस पद पर थे और उन्हें पूर्व मुख्यमंत्री तथा भाजपा नेता रघुवर दास का करीबी माना जाता था। सूत्रों ने कहा कि पिछले शासन में उनके कार्यों तथा कुछ दूसरी अटकलें इस निष्कासन का कारण रहे। हालांकि जल्द ही राज्य सरकार का बजट पेश किया जाना है तो झारखंड मुक्ति मोर्चा के नेतृत्व वाली सरकार केवल अहम पदों पर ही ध्यान दे रही है। ऐसी अटकलें भी हैं कि बर्णवाल ने चुनाव परिणाम घोषित होने से ठीक पहले ही केंद्र में किसी पद के लिए आवेदन कर दिया था। हालांकि बाद में इसके परिणाम के बारे में जानकारी नहीं है। फिलहाल वह कार्मिक मामलों की समन्वय एजेंसी कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग से जुड़े हैं।

समानांतर समारोह

कांग्रेस पार्टी देशभर में अपना 135वां स्थापना दिवस (28 दिसंबर) मना रही है। पार्टी की उत्तर प्रदेश इकाई से निष्कासित कुछ नेताओं ने भी अलग से इस मौके पर जश्न मनाया लेकिन साथ ही पार्टी द्वारा उनके खिलाफ कार्रवाई करने के खिलाफ आवाज भी उठाई। पिछले महीने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य संतोष सिंह और उत्तर प्रदेश के पूर्व विधायक सिराज मेहंदी सहित राज्य के 10 वरिष्ठ नेताओं को अनुशासनहीनता के आरोप में छह साल के लिए निष्कासित कर दिया गया था। एक तरफ उत्तर प्रदेश की 'आधिकारिक' कांग्रेस इकाई लखनऊ में पार्टी महासचिव प्रियंका गांधी वाड्रा की मेजबानी करने में व्यस्त थी, वहीं दूसरी ओर निष्कासित नेताओं ने दावा किया कि वे ही 'वास्तविक' कांग्रेस इकाई हैं। निष्कासित नेताओं ने कहा कि पार्टी की मौजूदा अनुशासनात्मक इकाई के पास उन्हें बाहर निकालने का कोई अधिकार नहीं था और इसमें आपराधिक रिकॉर्ड वाले लोग शामिल हैं।

आपका पक्ष

शांति से सुलझे राष्ट्रीय मसला

राष्ट्रीय महत्त्व के मसलों को हिंसा के सहारे नहीं सुलझाया जा सकता है। बाहर से आए जो लाखों लोग दशकों से पूर्वोत्तर में रह रहे हैं उन्हें उनके हाल पर नहीं छोड़ा जा सकता है। उन्हें नागरिक या शरणार्थी घोषित करने का काम करना ही होगा। इस मामले में एक सीमा तक ही उदारता दिखाई जा सकती है, क्योंकि भारत के पास इतने संसाधन नहीं है कि वह हर किसी को देश में रहने का अधिकार दे सके। विपक्ष असम की तर्ज पर पूरे देश में एनआरसी लागू करने की घोषणा का विरोध कर रहा है लेकिन उसे यह समझना होगा कि हर देश को यह जानने का अधिकार है कि उसके यहां रह रहे लोगों में कौन उसके नागरिक हैं। अन्य देशों की तरह भारत को भी अपने और दूसरे देशों के नागरिकों की पहचान करनी होगी। दूसरे देशों के नागरिकों की पहचान करते समय यह भी देखना होगा कि कौन घुसपैठिया है और कौन शरणार्थी।

भूपेंद्र सिंह रंगा, पानीपत

देश में नागरिकता संशोधन कानून का विपक्षी पर्टियां विरोध कर रही हैं

देश में विनिर्माण उद्योग की जरूरत

भारत में विनिर्माण क्षेत्र से जुड़े उद्योगों की बड़ी संख्या में जरूरत है। इस बात से सरकार या उद्योग जगत दोनों ही सहमत होंगे। इस बात पर गौर करना होगा कि क्या विनिर्माण उद्योग को दी जाने वाली प्रोत्साहन व सहूलियतें काफी हैं। बहरहाल उद्योगों के लिए पूंजी, भूमि और मशीनरी जितनी जरूरी श्रमशक्ति भी है। अच्छे प्रबंधक वे होते हैं जो विनिर्माण के लिए उत्तम श्रमशक्ति जुटाते हैं। देश से प्रतिभा पलायन रोकना जरूरी है। जो भारतीय युवा विकसित देशों में पहले से सेवारत हैं उन्हें घर वापसी के लिए मनाना जरूरी है। ऐसे युवा उस देश की अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान कर रहे हैं जो पहले से विकसित है।

हिम्मत जोशी, नागपुर

इस नववर्ष में सोच बदलने की जरूरत

नववर्ष में शुभकामनाएं देने के साथ हर किसी को अपने स्वार्थी, संकीर्ण और नकारात्मक सोच भी बदलनी चाहिए, तभी नववर्ष हर किसी के लिए मंगलमय और समाज, देश में नया परिवर्तन लेकर आएगा। अगर आप किसी का भला नहीं कर सकते तो किसी का बुरा भी न करें। नववर्ष पर परोपकार का संकल्प लिया जाए तो यह देश और समाज में एक नया और अच्छा बदलाव ला सकता है। देश का प्रत्येक नागरिक अगर अपने अंदर लोकसेवा की भावना का दीपक जलाए तो देश में कोई बच्चा शिक्षा से वंचित नहीं रहेगा। हर गरीब के भूखे पेट को भोजन मिल सकेगा। किसी गरीब को इलाज महंगा होने के कारण अपनी जान से हाथ नहीं धोना पड़ेगा। भारत साल दर साल विभिन्न क्षेत्रों में तरक्की करता आ रहा है, साथ ही कुछ ऐसी समस्याएं भी पैदा भी हुई हैं जो खुद इंसान और अन्य प्राणियों के अस्तित्व के लिए भी खतरा है। भारत में भी सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक व्याधियां बढ़ती जाएंगी। दुनिया में जो धर्म-संप्रदाय के नाम पर गलत काम हो रहे हैं वह इंसान के लिए उचित नहीं है। विश्वव्यापी समस्याओं का हल निकालने के लिए दुनिया के सभी नागरिकों, सत्ताधारियों को एकजुट होना चाहिए। अगर 2020 के लिए राजनेता और हर कोई देश के कल्याण के लिए संकल्प ले तो अवश्य ही देश में कुछ न कुछ अवश्य बदलाव हो सकता है।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।